प्रकाण्ड विद्वान और कवि-श्रेष्ठ श्रीजिनवल्लभसूरि

नवाङ्गवृत्तिकार आचार्य श्री अभयदेवसूरि के पट्टधर श्री जिनवल्लभसूरि जैन-शासन के महान् ज्योतिर्धर थे। उन्होने चैत्यवास का परित्याग कर अभयदेवसूरिजी से उपसम्पदा ग्रहण की। ये एक क्रान्तिकारी आचार्य और विशिष्ट विद्वान थे, जिन्होंने विधिमार्ग के प्रचार में प्रबल पुरुषार्थ किया और अनेकों महत्त्वपूर्ण ग्रन्थों का निर्माण कर जैन साहित्य का गौरव बढ़ाया। कूर्चपुरीय चैत्यवासी आचार्य श्री जिनेश्वर के आप शिष्य थे। व्याकरणादि समस्त साहित्य का अध्ययन करने के पश्चात् जैनागमादि साहित्य में निष्णात होने के लिए वाचनाचार्य पद देकर इनके गुरु जिनेश्वराचार्य ने अभयदेवसूरिजी के पास भेजा। अभयदेवसूरि ने इनकी विनयशीलता, असाधारण प्रतिभा को देख कर बड़े आत्मीय भाव से आगमादि का अध्ययन करवाया। इतना ही नहीं, अभयदेवसूरि के एक भक्त दैवज्ञ ने इन्हें ज्योतिष शास्त्र का अध्ययन करवा कर उस विषय में भी निष्णात बना दिया।

अभयदेवसूरि के पास अध्ययन समाप्त कर जब ये अपने गुरु के पास जाने लगे तो उन्होंने कहा कि सिद्धान्तों के अध्ययन का यही सार है कि तदनुसार आचार का पालन किया जाय। विद्यागुरु की इस हित-शिक्षा की उन्होंने गांठ बाँध ली और अपने गुरु जिनेश्वर से मिलकर चैत्यवास त्याग की आज्ञा प्राप्त कर पाटण—लौट आये और अभयदेवसूरिजी से उपसम्पदा ग्रहण कर ली। इसके बाद चित्तौड़ आये और चैत्यवासियों को निरस्त कर पार्श्वनाथ और महावीर चैत्यों की स्थापना की। तदनन्तर नागपुर और नरवर में भी विधि-चैत्य स्थापित किये। मेवाड़, मालव, मारवाड़ और बागड़ आदि प्रदेशों में इन्होंने सुविहित मार्ग का खूब प्रचार किया। इनके ज्योतिष-ज्ञान और विद्वता की सर्वत्र प्रसिद्धि हो गई। धारा-नरेश नरवर्म ने एक विद्वान की दी हुई समस्यापूर्त्ति अपने सभा-पण्डितों से न होते देख, दूरवर्त्ती श्री जिनवल्लभसूरि को वह समस्या पद भेजा, जिसकी सम्यक् पूर्त्ति से नृपति बहुत प्रभावित हुए और उनके भक्त हो गए।

जिनवल्लभगणि को सं० ११६७ मिती आषाढ़ शुक्ला ६ को चित्तौड़ के वीर विधि-चैत्य में कथाकोष आदि के निर्माता देवभद्रसूरि ने आचार्य पद देकर अभयदेवसूरि का पट्टधर घोषित किया। पर चार मास ही पूरे नहीं हो पाये और मिती कार्त्तिक कृष्ण १२ को इनका स्वर्गवास हो गया।

जिनवल्लभसूरि को परवर्त्ती विद्वानों ने कालिदास के सदृश कवि बतलाया है। प्राकृत, संस्कृतादि भाषाओं में इनकी पचासों रचनायें प्राप्त हैं, इनमें से कई सैद्धान्तिक रचनाओं का तो अन्यगच्छीय विद्वान आचार्यों ने टीकाएं रच कर इनकी महत्ता को स्वीकार किया है।

चैत्यवास के प्रभाव से जैन मन्दिरों में जो अविधि का प्रवर्त्तन हो गया था उसका निषेध करते हुए विधिचैत्यों के नियमों को इन्होंने शिलोत्कीर्ण करवाया। संवेगरंगशाला के संशोधन में भी इनका योग रहा। आपके शिष्यों में रामदेव, जिनशेखरादि कई विद्वान थे। आचार्य देवभद्रसूरि ने सोमचन्द्र गणि को इनके पट्ट पर स्थापित कर जिनदत्तसूरि नाम से प्रसिद्ध किया।

जिनवल्लभसूरिजी की जीवनी और उनके ग्रन्थों के सम्बन्ध में महो० विनयसागरजी लिखित अध्ययन पूर्ण शोध-प्रबन्ध प्रकाशनाधीन हैं।

—अगरचंद नाहटा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org